6

इकट्ठे हैं तो खड़े हैं

(फिलिप्पियों 2:1-4)

एसप की कहानियों[1] में से एक ''चार बैल और शेर'' है। कहानी इस प्रकार है: एक बार चार बैल थे जो बड़े अच्छे मित्र थे। वे इकट्ठे घूमते, इकट्ठे चरते और एक-दूसरे के निकट रहते ताकि वे एक-दूसरे की रक्षा कर सकें। परन्तु शेर ने उन्हें खाने की ठान ली थी। वह एक-एक करके सबको खा सकता था, पर चारों को इकट्ठे नहीं। सो उसने एक तरकीब निकाली। जब भी कभी एक बैल दूसरों से पीछे रह जाता तो शेर उसके कान में फुसफुसाता कि उसके तीनों दोस्त उसकी बुराइयां कर रहे थे। थोड़ी देर बाद हर बैल ने निष्कर्ष निकाला कि दूसरे बैल उसके विरुद्ध षड्यंत्र रच रहे हैं और हर बैल अलग-अलग रास्ते पर चलने लगा। इस प्रकार शेर ने चारों को अपना निवाला बना लिया।[2] कहानी इस ''शिक्षा'' के साथ खत्म होती है कि ''इकट्ठे हैं तो खड़े हैं; बंटे हैं तो गिरे हैं।''[3]

इन परिचित शब्दों में व्यक्त सच्चाई को सारे संसार में माना जाता है।[4] राजनयिक लोग इसकी सच्चाई को मानते हैं। 1769 में जॉन डिक्सन[5] ने अपने देश के लोगों से आग्रह किया, ''तो बहादुर अमेरिकियो सब मिलकर हाथ मिलाओ; इकट्ठे रहने से हम खड़े हैं और बंट जाने से हम गिरे हैं।'' सैनिक नीतियों को बनाने वाले लोग इस सच्चाई को मानते हैं। एक पुरानी कहावत है ''फूट डालो और राज करो।''[6] धर्म में इन शब्दों का दोगुना महत्व है। यीशु ने अपने चेलों के लिए प्रार्थना की कि वे एक रहें (यूहन्ना 17:20-23) और यह सामान्य वास्तविकता बताई कि ''यदि किसी राज्य में फूट पड़े, तो वह राज्य क्योंकर स्थिर रह सकता है'' (मरकुस 3:24)।

''मसीही व्यक्ति को 'केवल' क्या करना है'' पाठ में हमने ''मसीह के सुसमाचार के योग्य'' अपने चाल-चलन पर ध्यान दिया था (फिलिप्पियों 1:27)। हमने देखा कि अनुवादित शब्द ''चाल-चलन'' संकेत देता है कि हमारा व्यवहार स्वर्गीय राज्य के नागरिक जैसा होना चाहिए। ऐसा करने का एक ढंग मन, हृदय और जीवन का एक होना है:

> केवल इतना करो कि तुम्हारा चाल-चलन मसीह के सुसमाचार के योग्य हो कि चाहे मैं आकर तुम्हें देखूं, चाहे न भी आऊं, तुम्हारे विषय में यह सुनूं, कि तुम एक ही आत्मा में स्थिर हो, और एक चित्त होकर सुसमाचार के विश्वास के लिए परिश्रम करते रहते हो (फिलिप्पियों 1:27)।
>
> तो मेरा यह आनन्द पूरा करो कि एक मन रहो और एक ही प्रेम, एक ही चित्त, और एक ही मनसा रखो (2:2)।

किसी देश के लोगों में जब फूट पड़ जाती है तो उनके शत्रु उन्हें आसानी से शिकार बना सकते हैं। जब स्वर्ग के राज्य के लोगों में फूट पड़ती है तो वे केवल राजा के लिए ही परेशान

नहीं हैं (देखें 1 कुरिन्थियों 1:10-13; गलातियों 5:19-21), बल्कि वे अपने ''विरोधी'' के सामने भेद्य भी बन जाते हैं जो ''गर्जने वाले सिंह की नाईं इस खोज में रहता है, कि किस को फाड़ खाए'' (1 पतरस 5:8)।

इस पाठ के लिए हमारा वचन पाठ फिलिप्पियों 2:1-4 है। हम चाहे न्याय अध्याय आरम्भ कर रहे हैं पर पौलुस ने इस चर्चा को जारी रखा कि फिलिप्पियों का व्यवहार कैसा होना चाहिए। ''सो'' शब्द अध्याय 2 के आरम्भ में अध्याय 1 के अन्तिम भाग से जोड़ता है। पहली चार आयतों में ज़ोर एकता पर दिया गया है।

आत्मा में एक (2:1, 2)

1:27-30 में पौलुस ने अपने पाठकों को दृढ़ रहने और अपने विरोधियों से न डरने की शिक्षा दी। अब, अध्याय 2 की आरम्भिक आयतों में उसने ज़ोर दिया कि अड़ोल रहने और भयभीत न होने का मुख्य कारण साथी मसीही लोगों से मिली स्थिरता और सामर्थ है। जो वे बनना चाहते थे वह बनने के लिए उन्हें *एक* होना आवश्यक है।

अध्याय का आरम्भ चर्चा के अधीन विषय के महत्व को रेखांकित करने के लिए बनाए साहित्यिक साधन से होता है: ''सो यदि मसीह में कुछ शान्ति, और प्रेम से ढाढ़स और आत्मा की सहभागिता, और कुछ करुणा और दया है'' (आयत 1)। ''यदि'' शब्द आम तौर पर किसी शब्द का परिचय देता है और इसका संकेत होता है कि होने वाली बात हो भी सकती है या नहीं भी। पौलुस ने इस प्रकार से इस शब्द का इस्तेमाल इस प्रकार नहीं किया। बल्कि उसने इसका इस्तेमाल विशेष सच्चाइयों पर ज़ोर देने के लिए परमेश्वर की प्रेरणा से दी गई अलंकारिक अभिव्यक्ति के रूप में किया। आयत 1 में ''सो'' शब्द को अगर ''यदि'' शब्द की जगह लगाया जाए तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा।

विशेष गुणों का उल्लेख केवल आयत में मिलता है, परन्तु यीशु में मिलने वाली आशिषों की बेहतर समीक्षा ढूंढ़ना कठिन होगा:

- ''मसीह में शांति'': अनुवादित शब्द ''शांति'' (यू.: *paraklesis*) का मूल अर्थ ''साथ बुलाना'' है। इसका अर्थ है कि किसी को (या किसी ने) सहायता के लिए ''साथ बुलाया'' गया है। इसका अनुवाद ''ताड़ना'' (ASV) या ''सांत्वना'' (KJV) भी किया जा सकता है। NCV में पूछा गया है, ''क्या मसीह में तुम्हारा जीवन तुम्हें सामर्थ देता है?'' हमारा उत्तर ज़ोरदार शब्दों में ''हां'' है।
- ''प्रेम से ढाढ़स'': ''ढाढ़स'' (यू.: *paramuthia* जिसका अर्थ है ''के साथ बोलना'') अनुवादित शब्द ''शांति'' से मिलता-जुलता है। इसका अर्थ ''सांत्वना'' (KJV, NIV) या ''प्रोत्साहन'' (RSV) भी हो सकता है। NCV में पूछा गया है, ''क्या उसका प्रेम तुम्हें सांत्वना देता है?'' हां, देता है! परमेश्वर ने मुझसे इतना प्रेम रखा कि उसने अपने पुत्र को भेज दिया (यूहन्ना 3:16), और वह दिन प्रति दिन अपने प्रेम को दिखाता रहता है (रोमियों 8:39)।
- ''आत्मा की सहभागिता'': ''आत्मा'' शब्द का अर्थ मनुष्य की आत्मा या पवित्र आत्मा हो सकता है। यह मानने वाले कि इसका अर्थ मनुष्य की आत्मा है ध्यान

दिलाते हैं कि मूल धर्मशास्त्र में ''आत्मा'' के लिए शब्द से पूर्व निश्चित उपपद (''the'') नहीं था। परन्तु अंग्रेज़ी में व्यापक इस्तेमाल होने वाले अनुवादों में आत्मा के लिए ''Spirit'' में ''S'' बड़ा करके इसका संकेत पवित्र आत्मा के लिए दिया गया है (रोमियों 8:39) (KJV, NKJV, ASV, NASB, NIV, RSV)। यह मानते हुए कि यह सही है, ''आत्मा की सहभागिता'' वाक्यांश का संकेत ''पवित्र आत्मा के साथ सहभागिता'' (देखें NIV) या ''वह सहभागिता जो हमें आत्मा के कारण मिलती है'' हो सकता है। या तो यह व्याख्या सम्भावित है और दोनों का संकेत महत्वपूर्ण सच्चाइयों की ओर है; परन्तु बाद वाला यहां अधिक सही लगता है। पानी में बपतिस्मा (डुबकी) लेने पर हमें दान के रूप में परमेश्वर का आत्मा मिलता है (प्रेरितों 2:38), और यह हमें मिलाने वाला होना चाहिए (देखें 1 कुरिन्थियों 12:13)। रिचर्ड गफ़िन ने निष्कर्ष निकाला कि ''विश्वासियों ने आत्मा के द्वारा बनाई गई सहभागिता, जो उन में से हर एक में वास करता है [देखें 2 कुरिन्थियों 13:14]।''[7] ''क्या आपके लिए इसका अर्थ उससे अलग है कि हम प्रभु में भाई हैं और हमें एक ही आत्मा मिला है?'' (LB)। होना चाहिए!

- ''करुणा और दया'': जिन्होंने परमेश्वर के प्रेम को जान लिया है, वे दूसरों से प्रेम रखते हैं (1 यूहन्ना 4:11; देखें कुलुस्सियों 3:12)। क्या फिलिप्पियों को करुणा और दया मिली थी? हां, उन्हें मिली थी (देखें फिलिप्पियों 1:8), और वैसे ही हमें भी मिली है!

हमारी तरह फिलिप्पियों को भी ये सभी आत्मिक आशिषें मिली थीं। मसीह में अपनी आशिषों को कम न समझें! उन्हें आम न बनने दें।

हमारा मन तो आयत 1 से हटने को करता ही नहीं है पर हमें पौलुस की बात को समझने की आवश्यकता है। क्योंकि फिलिप्पियों को इन ढंगों से आशीष मिली थी, प्रेरित ने इसलिए विनती की थी। उसने आरम्भ किया, ''... मेरा यह आनन्द पूरा करो ...'' (आयत 2क)। फिलिप्पी के भाइयों ने पहले ही उसे प्रसन्न किया था (1:3, 4; 4:1) अब एक अर्थ में उसने कहा कि ''उस आनन्द को बढ़ा दो।'' यूनानी शब्द के अनुवाद ''पूरा करो'' का अर्थ ''भरना'' है।[8] KJV में ''पूरा करना'' (''पूरा भरना'') है। जे. बी. लाइफफुट के संस्करण में ''आनन्द का मेरा कटोरा ऊपर तक भर दो'' है।[9]

पौलुस के आनन्द को ऊपर तक कौन भर सकता था? ये सुनना कि फिलिप्पी के मसीही उस शांति और एकता का आनन्द ले रहे हैं: ''मेरा यह आनन्द पूरा करो कि एक मन रहो [मूल में, ''एक ही बात सोचो''], और एक ही प्रेम, एक ही चित्त [मूल में, ''एक जान''] और एक ही मंशा [मूल में, ''एक ही बात सोचते हुए''] रखो'' (2:2)। इसकी शब्दावली (1:27) की शब्दावली से मेल खाती है: प्रेरित उन्हें *आत्मा* (सोच में, ''एक ही मन वाले होकर'') और *चित्त* (''आत्मा में एक'') बनाना चाहता था। परन्तु उसने दो नई बातें जोड़ दीं: वह उन्हें *आत्मा* में (''उसी प्रेम को बरकरार रखते हुए'') और *लक्ष्य* (''एक ही मंशा रखकर'') एक करना चाहता था। पौलुस चाहता था कि फिलिप्पी के लोग हृदय, मन और प्राण से एक हों। लेखकों ने पाया

है कि आयत 1 की याद दिलाने वाली बातों को आयत 2 की विनतियों से मिलाया जा सकता है:

- ''मसीह में शांति'' है (आयत 1), इसलिए ''एक मन'' हो (आयत 2)।
- ''प्रेम की ढाढ़स'' (आयत 1) है, इसलिए ''उसी प्रेम'' (आयत 2) को बनाए रखो।
- ''आत्मा की सहभागिता'' (आयत 1) है, इसलिए ''आत्मा में एक'' (आयत 2) रहो।
- ''करुणा और दया'' (आयत 1) है, इसलिए ''एक ही मंशा'' (आयत 2) रखो।

एकता एक बहुमूल्य गुण है और मसीह के कार्य के लिए बहुत ही आवश्यक है! यीशु ने अपने अनुयायियों के लिए प्रार्थना की कि वे ''एक हों'' ताकि संसार यकीन जाने कि परमेश्वर ने ही उसे भेजा था (यूहन्ना 17:21, 23)। सभोपदेशक नामक पुस्तक के लेखक ने इकट्ठा होने से मिलने वाली सामर्थ की बात की: ''यदि कोई अकेले पर प्रबल हो तो हो, परन्तु दो उसका सामना कर सकेंगे। जो डोरी तीन धागे से बंटी हो वह जल्दी नहीं टूटती'' (4:12)। एक बात जिससे परमेश्वर को घृणा है वह है ''भाइयों के बीच में झगड़ा उत्पन्न करने वाला मनुष्य'' (नीतिवचन 6:19)। एकता की आशिषों और फूट के श्राप वाली और आयतों में उत्पत्ति 14:18; रोमियों 15:5; 16:17; 1 कुरिन्थियों 1:10; गलातियों 5:19-21; इफिसियों 4:1-6.

इन पाठों का अध्ययन करते हुए मुझे आश्चर्य हुआ कि कई लेखकों ने विशेषकर शिक्षा और डॉक्ट्रिन में एकता के विरोध में बात करने के बहाने के रूप में फिलिप्पियों 1:27 और 2:2 का इस्तेमाल किया। उनमें से अधिकतर का दावा है कि ''एकता को एकरूपता नहीं कहा जा सकता।'' मैं इस बात को समझता हूं कि हम सभी भिन्न-भिन्न हैं, यानी हर बात में हम सहमत नहीं होते हैं, पर परमेश्वर फिर भी एक मूल एकता की मांग करता है।

बीते समय में आम तौर पर एक नारा सुनाई देता था कि ''विश्वास, एकता के मामलों में; विचार, उदारता के मामलों में; और सब बातों में, चैरिटी [यानी प्रेम ही है]।'' यह समझा गया कि ''विश्वास की बातें'' वे नियम हैं, जिन्हें परमेश्वर के वचन में स्पष्ट बताया गया है (देखें रोमियों 10:17)। इन पर हमें एक होना *आवश्यक* है। ''विचार के मामले'' ऐसे विषय हैं जिन पर बाइबल में कोई स्पष्ट बात नहीं मिलती। इन पर हम अप्रिय हुए बिना असहमत हो सकते हैं (इफिसियों 4:1-3 *आत्मा* की एकता पर शिक्षा देखें)। भाइयों में कई बार किसी विशेष शिक्षा परख्वाहे वह ''विश्वास की बात'' हो या ''विचार की बात'' मतभेद हो ही जाता है, पर आमतौर पर दिए जाने वाले नारे के मूल नियम विचार और शिक्षा की मूल एकता का कारण बनते हैं। बेशक सब मामलों में हमें *प्रेम* से प्रेरित होना चाहिए।

हमें हर बात पर सहमत होने की आवश्यकता नहीं है पर काश टीकाकार वचन पर दिए जाने वाले ज़ोर के साथ बने रहते। यदि सभी नहीं तो उनमें से अधिकतर ने तो वचन में से ''एकता'' को निचोड़ दिया था। प्रभाव यह गया कि हर व्यक्ति के लिए ''जिसको जो ठीक सूझ पड़े'' वही मान ले (न्यायियों 21:25)। परमेश्वर ''एक चित्त'' होने, ''एक ही प्रेम'' को बरकरार रखने, ''आत्मा में एक रहने'' और ''एक ही मंशा रखने'' की कोशिश करने में सहायता करे!

निस्वार्थपन में एक (2:3, 4)

हमारे अलग-अलग व्यक्तित्व और प्राथमिकताएं हैं। तो हम एक कैसे हो सकते हैं? सम्भवतया हमारी एकता में सबसे महत्वपूर्ण बात यीशु में हमारा साझा विश्वास है। हम सभी को ''उसके साथ'' (रोमियों 6:5) मिलाया गया है इसलिए हम सभी एक-दूसरे के साथ भी मिलाए गए हैं। परन्तु साथी मसीहियों के प्रति हमारा व्यवहार महत्वपूर्ण है। जब हम आत्म-केन्द्रित होते और विचार के मामलों में अपनी ही बात को आगे रखते हैं तो एकता असम्भव होती है।

3 और 4 आयतों में पौलुस ने निस्वार्थ होने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया। इन आयतों में उसके निर्देशों का पालन कठिन है, परन्तु उनकी बहुत आवश्यकता है! आयत 3 का आरम्भ होता है, ''विरोध या झूठी बड़ाई के लिए कुछ न करो।'' ''विरोध'' के लिए शब्द उसी मूल यूनानी शब्द में से लिया गया है जिसमें से 1:17 वाला ''विरोध'' शब्द है। इस शब्द का अर्थ लोगों को पीछे लगाने की कोशिश करना है चाहे इससे झगड़ा ही हो जाए। दुख की बात है कि भाई ''काम को बढ़ाने के लिए नहीं, बल्कि अपने आपको बढ़ावा देने के लिए'' काम कर सकते हैं।[10] ''विरोध'' के साथ ''झूठी बढ़ाई'' शब्द जुड़ा है। NCV में इसे ''घमण्ड'' लिखा गया है। इस वाक्यांश का अनुवाद मिश्रित यूनानी शब्द से किया गया है, जिसका अर्थ ''झूठी शान'' है। जब किसी का उद्देश्य अपनी शान को बढ़ाना हो, तो अन्त में वह ''शान'' झूठी और बेकार बन जाएगी।

स्वार्थ और घमण्ड का क्या इलाज़ है? आयत 3 आगे कहती है, ''पर दीनता से एक-दूसरे को अपने से अच्छा समझो।'' ''दीनता'' गलत समझा गया शब्द है। कइयों को लगता है कि इसका अर्थ अपने आपको किसी काम का न समझना है, पर यह गलत है। मूसा को ''बहुत अधिक नम्र स्वभाव'' (गिनती 12:3) का माना जाता है, पर ऐसा कोई संकेत नहीं है कि इस महान अगुवे को कभी बेकार समझा गया हो। यीशु ने अपने आपको ''नम्र और मन में दीन हूं'' कहा (मत्ती 11:29; देखें फिलिप्पियों 2:8), परन्तु उस महिमा की भी बात की जो परमेश्वर ने उसे दी थी (यूहन्ना 17:22; देखें यूहन्ना 2:11)। प्रभु ने अपनी कद्र कम करने में समय बर्बाद नहीं किया।

यूनानी लोग दीनता को कोई महत्व नहीं देते थे। इस शब्द का क्रिया रूप ''गुलाम की मानसिकता का वर्णन करने के लिए किया जाता था। इसमें नीच, अयोग्य, फटीचर, ... किसी काम का नहीं, का विचार पाया जाता था।''[11] कोई मूर्तिपूजक ''दीन'' होने का ठप्पा लगने पर भयभीत हो जाता होगा। परन्तु नये नियम के लेखकों ने दीनता को एक खूबी बल्कि सबसे बड़ा गुण बना दिया। पतरस ने लिखा:

> ... तुम सब के सब एक-दूसरे की सेवा के लिए दीनता के कमर बान्धे रहो, क्योंकि परमेश्वर अभिमानियों का सामना करता है, परन्तु दीनों पर अनुग्रह करता है।
>
> इसलिए परमेश्वर के बलवन्त हाथ के नीचे दीनता से रहो, जिससे वह तुम्हें उचित समय पर बढ़ाए (1 पतरस 5:5, 6)।

दीन होने का क्या अर्थ है ? हम अपनी बातचीत और व्यवहार में शालीन होने की आवश्यकता पर बात कर सकते हैं। हम पौलुस की शिक्षा पर चर्चा कर सकते हैं कि ''जैसा समझना चाहिए, उस से बढ़कर कोई भी अपने आप को न समझे'' (रोमियों 12:3), परन्तु फिलिप्पियों 2:3, 4 में ''दीनता से'' वाक्यांश के अगले शब्दों में सुझाई गई परिभाषा शायद सबसे बढ़िया है: ''... विरोध या झूठी बड़ाई के लिए कुछ न करो पर दीनता से एक-दूसरे को अपने से अच्छा समझो। हर एक अपने ही हित की नहीं, वरन दूसरों के हित की भी चिन्ता करे''।

दीनता का अर्थ आम विरोध के बजाय ''निस्वार्थ है।'' यह अपने बारे में बुरा सोचना नहीं, बल्कि दूसरों की इतनी परवाह करना है जिससे अपना आप भूल जाए। हमारे वचन पाठ की अगली आयतों में पौलुस ने दीनता का श्रेष्ठतम नमूना यीशु को बताया। मसीह को हमारी आवश्यकताओं का इतना ध्यान था कि एक अर्थ में वह अपने आपको ''भूल गया'' इस पृथ्वी पर आ गया और हमारे लिए मर गया (आयतें 5-8)। पौलुस अपने पाठकों को ऐसा ही ''मन'' रखने की चुनौती देता है (आयत 5; KJV)। आर. सी. बेल ने कहा है, केवल ''विनम्र लोग ही एक जैसी सोच रख सकते हैं।''[12]

कइयों को आयत 3 का अन्तिम भाग समझना कठिन लगता है। NASB में ''एक दूसरे को अपने से महत्वपूर्ण मानो'' है। अनुवादित शब्द ''से महत्वपूर्ण'' मिश्रित यूनानी शब्द का एक रूप है *echo* (''पकड़ना'') के साथ पूर्व सर्ग *huper* (''ऊपर'') को मिलाता है। मूल में इसका अर्थ ''के ऊपर रखना'' है। प्रतीकात्मक अर्थ में इसका अर्थ ''श्रेष्ठ होना, बेहतर होना'' है।[13] अधिकतर मानक अनुवादों में आयत 3 में ''से उत्तम'' है (KJV, NKJV, ASV, NIV, RSV)। हम इसे ''बढ़ाई गई दूसरी बड़ी आज्ञा'' के रूप में मान सकते हैं। दूसरी बड़ी आज्ञा कहती है, ''तू अपने पड़ोसी से अपने समान प्रेम रख'' (मत्ती 22:39)। ''बढ़ाई गई दूसरी बड़ी आज्ञा'' कहती है, ''तू अपने पड़ोसी से अपने अधिक'' प्रेम रख।

दूसरों को अपने से बेहतर मानने की शिक्षा कइयों के लिए परेशानी है। वे किसी साथी मसीही की ओर वापस करते हुए कहते हैं, ''मैं उसे अपने से *बेहतर* या अधिक महत्वपूर्ण क्यों मानूं। वह अधिक पढ़ा लिखा ... या अधिक गुणी ... या अधिक कुशल या अधिक शक्तिशाली ... या अधिक सुन्दर ... या अधिक भक्त नहीं है!'' इस प्रकार से तर्क देने वाले लोग इस वचन की मुख्य बात को नहीं समझ पाते। यह यह नहीं कहता कि दूसरा व्यक्ति आपसे *है,* बल्कि यह तो यह कहता है कि आप उसे बेहतर *मानें।* संदर्भ में *उसकी* आवश्यकताओं को अपनी आवश्यकताओं से आवश्यक मानना है। अरल पार्मर ने सुझाव दिया कि पौलुस ''पहली सदी की अभिव्यक्ति'' का इस्तेमाल कर रहा था ''जिसका बेहतर अनुवाद 'दूसरों को पंक्ति में अपने से आगे रखो' है।''[14] पौलुस यदि आप कभी लाइन में खड़े हों जहां लोग खिड़की के पास जाने की कोशिश करते हुए एक दूसरे को धक्कम-धक्का कर रहे होते हैं तो आप इस रूपक को समझते हैं। एक लेखक ने सुझाव दिया कि दूसरों को देखने के हमारे दृष्टिकोण में सुधार के लिए हम कह सकते हैं, ''यदि मेरा जन्म और पाल पोषण उस व्यक्ति की तरह हुआ होता, मुझे उसकी क्षमता और अवसर मिले होते, तो मैं क्या होता?'' या ''यदि उस व्यक्ति का पालन पोषण मेरे घर में हुआ होता और उसमें मेरे वाली क्षमता और अवसर होते, तो वह कैसा होता?''

आयत 3 के अन्तिम भाग को पढ़ते हुए मेरा ध्यान अपने माता-पिता की ओर जाता है। मेरे

भाई कोय और मेरा जन्म तंगहाली में हुआ था। मेरे माता-पिता के पास इतने पैसे नहीं थे पर वे यह सुनिश्चित करते थे कि कोय और मुझे वे फल और सब्जियां मिलती रहें जो हमारे स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक थीं, चाहे उन्हें भूखे पेट सोना पड़ता। वे हमें अपने से ''अधिक महत्वपूर्ण'' इसलिए नहीं मानते थे कि हम उन से बड़े, शक्तिशाली या समझदार थे बल्कि इसलिए मानते थे क्योंकि वे हम से प्रेम करते थे।[15]

फिलिप्पियों 2:3, 4 हमें मसीह में अपने भाइयों और बहनों के साथ ऐसा ही व्यवहार रखने का आग्रह करता है। प्रेम हमें दूसरों को ''बेहतर'' और ''अधिक महत्वपूर्ण'' दिखाता है। बच्चों का एक गीत है ''J-O-Y, J-O-Y, surely this must mean Jesus first and yourself last and other in between'' ''अर्थात आ-नं-द, आ-नं-द, यकीनन इसका अर्थ पहले यीशु और आप सबसे पीछे और दूसरे उसके बीच में'' है। बहुत पहले मैंने ''Me third'' क्लास नामक बच्चों की एक बाइबल क्लास के बारे में पढ़ा था।[16] जिसने भी उस नाम के बारे में सोचा उसे उस आत्मा की झलक मिल गई, जिसकी बात पौलुस कह रहा था।

हमारा वचन पाठ इन शब्दों के साथ समाप्त होता है: ''हर एक अपने ही हित की नहीं वरन दूसरों के हित की भी चिन्ता करे'' (आयत 4)। बाइबल अपने लिए जायज चिन्ता की बात सिखाती है (देखें मत्ती 22:39; इफिसियों 5:28, 29)। परन्तु हमें सावधान रहना चाहिए कि स्वार्थी न बन जाएं। हमें दूसरों की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील होना आवश्यक है। 3 और 4 आयतों में पौलुस के निर्देशों को मानना कठिन है। अपने विचारों को अपने ऊपर केन्द्रित न करना *कठिन* है।

सारांश

हमने दो सच्चाइयों को प्रकाशमान करने की कोशिश की थी। (1) एकता की आवश्यकता और (2) एकता को पाने का मुख्य कारक यानी निस्वार्थपन। अगले पाठों में हम निस्वार्थपन के नमूनों अर्थात यीशु और पौलुस के दो सहकर्मियों का अध्ययन करेंगे। इस अध्ययन को समाप्त करते हुए व्यक्तिगत प्रासंगिकता बनाते हैं। आपके लिए एकता कितनी महत्वपूर्ण है? यह सुनिश्चित करने के लिए कि उस मण्डली में जहां आप आराधना करते हैं। शांति और एकता बनाए रखना सुनिश्चित करने के लिए आप क्या त्याग करने को तैयार हैं? मैं बाइबल सच्चाइयों से समझौता करने की बात नहीं कर रहा। मैं घमण्ड और स्वार्थ को त्यागने की बात कर रहा हूं। मैं ऐसा झगड़ा होने पर अपनी मर्ज़ी मनाने पर ज़ोर न देने की बात कर रहा हूं। याद रखें: ''इकट्ठे हैं तो खड़े हैं बंटें हैं तो गिरे हैं!''

टिप्पणियां

[1]एसप एक यूनानी लोक नायक है जो छटी शताब्दी ई.पू. का माना जाता है। उसे जानवरों की कहानियां बताने के लिए याद किया जाता है। ये कहानियां उसकी मृत्यु के कई साल बाद इकट्ठी की गईं और उन में ''शिक्षाएं'' जोड़ दी गईं। आज भी बच्चे उनका आनन्द लेते हैं। [2]पॉल ली टेन, *इन्साइक्लोपीडिया ऑफ़ 7, 700 इलस्ट्रेशंस: साइन्ज़ ऑफ़ द टाइम्स* (रॉकविल्ले, मेरीलैंड: एश्योरेंस पब्लिशर्स, 1979), 1172 से लिया गया। [3]जॉन बार्टलेट, *दि शॉर्टर बार्टलेट'स फेमिलियर कोटेशंस,* संपा. क्रिस्टोफर मोरले (न्यू यॉर्क: परमाबुक्स, 1953), 5. [4]अमेरिका

में कुछ साल पहले एक गीत प्रसिद्ध हुआ था जिसमें ''यूनाइटेड वी स्टैंड, डिवाइडेड वी पोल'' शब्द प्रमुख थे। (टॉली हिलर एंड पीटर साइमंस, ''यूनाइटेड वी स्टैंड,''© बेल्विन मिलस, 1970)। [5]जॉन डिकन्स (1732–1808) अमेरिकी कांटिनेंटल कांग्रेस का एक सदस्य और अमेरिकी क्रांति के दौरान देशभक्ति के पर्चों का लेखक था। अगला उदाहरण 1768 में प्रकाशित *द लिबर्टी सॉंग्स* में मिलता है–देश के लोगों को एक होने को दर्शाता है। यदि आपके देश के नेताओं ने लोगों को इकट्ठे खड़े होने का अग्रह किया हो तो आप जॉन डिक्सन के शब्दों की जगह उनके शब्दों का इस्तेमाल कर सकते हैं। [6]यह निकोलो मैकेयावेली की *दि आर्ट ऑफ वार* (1521) (लातीनी भाषा में) उद्धृत किया गया था। मैकेयावेली (1469–1527) इटालवी राजनैतिक लेखक और सैनिक सिद्धांतवादी था। [7]रिचर्ड बी. गफिन, जूनि., नोट्स ऑन फिलिप्पियंस, *दि NIV स्टडी बाइबल,* संपा. केन्नथ बार्कर (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: जौंडरवन पब्लिशिंग हाउस, 1985), 1805. [8]*दि एनेलेटिकल ग्रीक लैक्सिकन* (लंदन: समुएल बैगस्टर एंड सन्स, लिमिटेड, 1971), 329. [9]जॉन ए. नाइट, *फिलिप्पियंस, क्रोलेशियंस, फिलेमोन,* बिकन बाइबल एक्सपोज़िशन (कैनसस सिटी, मिज़ोरी: बिकोन हिल्स प्रैस, 1985), 61 जे. बी. लाइटफुट, में उद्धृत। [10]विलियम बार्कले, *दि लैटर टू द फिलिप्पियंस, क्रोलोशियंस एंड थिस्सलोनियंस,* संशो. संस्क., दि डेली स्टडी बाइबल सीरीज़ (फिलाडेल्फिया: वेस्टमिंस्टर प्रैस, 1975), 31.

[11]गेरल्ड एफ. हाथॉर्न, *वर्ड बिब्लिकल कमैंट्री* अंक 43, *फिलिप्पियंस,* संपा. डेविड ए. हब्बर्ड एंड ग्लेन डब्ल्यू. बार्कर (वाको, टैक्सस: वर्ड बुक्स, 1983), 69. [12]आर. सी. बेल, *स्टडीज इन फिलिप्पियंस* (ऑस्टिन टैक्सस: फर्म फाउंडेशन पब्लिशिंग हाउस, 1971), 19. [13]डब्ल्यू. ई. वाइन, *दि एक्सपेंडिड वाइन 'ज़ एक्सपोजिटरी डिक्शनरी ऑफ न्यू टैस्टामेंट वर्ड्स,* संपा. जॉन आर. कोहलेन्बर्गर त्रितीय के साथ जेम्स ए. सवेन्सन (मिनयापुलिस: बेथनी हाउस पब्लिशर्स, 1984), 115. [14]अरल एफ. पामर, *इंटेग्रिटी इन ए वर्ल्ड ऑफ प्रिटेंस: इंसाइट्स फ्रॉम द बुक ऑफ़ फिलिप्पियंस* (डाउनर्स ग्रोव, इलिनोइस: इंटरवर्सिटी प्रैस, 1992), 90. [15]बलिदानपूर्वक प्रेम के उदाहरण और भी दिए जा सकते हैं। उन उदाहरणों का इस्तेमाल करें जिन से आपके सुनने वाले अच्छी तरह परिचित हो। [16]मनफोर्ड जॉर्ज, गुज़के, *प्लेन टॉक ऑन फिलिप्पियंस* (ग्रैंड रैपिड्स, मिशिगन: लैम्पलाइटर बुक्स, जौंडरवन पब्लिशिंग हाउस, 1973), 79.